कृषि भूमि का अमानवीय अधिग्रहण

जब गरीब को लगता है, उसके हिस्से की रोटी बड़ी–बड़ी गाड़ियों वाले ले जा रहे हैं। उनके छोट–छोटे खेत हवेलियों के हवाले किये जा रहे हैं, तो ऐसा ज्वालामुखी फूटना लाजमी है। ऐसी आग तभी धधकती है जब शांत स्वभाव वाले वर्ग को लगता है कि उसका तथा उसके परिवार के अस्तित्व पर ही प्रश्न चिन्ह लगने जा रहा है। किसानों के खेत औन–पौने दामों में छीन उन्हें झूठे आश्वासनों तथा अल्प मुआवजे की लम्बी कतार में खड़ा करने का प्रयास हो रहा है। यह बात तय है कि यह संघर्ष अचानक नहीं प्रारम्भ हुआ, दावानल एकाएक नहीं भड़का। इसकी जमीन वर्षों से केन्द्र तथा प्रदेश की सरकारों की उनके प्रति उपेक्षा तथा बेरुखी धीरे–धीरे तैयार हो रही थी। हम चीन को लें, वहाँ 62 हजार किलोमीटर हाई वे का निर्माण हो चुका है। एक भी किसान की गोली से हत्या नहीं हुई। सिर्फ उत्तर प्रदेश में नोएडा से मथुरा तक बेहतर मुआवजे की माँग को लेकर 15 लोग पिछले साढ़े तीन वर्षों में मारे जा चुके हैं। चीन में केवल 6–7 स्पेशल इकोनॉमिक जोन बने हैं, जब कि भारत में 1000 से ज्यादा सेज के प्रस्ताव स्वीकृत किये जा चुके हैं। चीन में कृषि जमीन हमसे कम है। वहाँ बेहतर सरकारी व्यवस्था के द्वारा अनाज का उत्पादन 51 करोड़ टन के आस–पास पहुँच चुका है। लेकिन हमारे यहाँ भारत में 21 करोड़ टन के लगभग ही होता है। चीन में वहाँ की सरकार ने स्वयं जिम्मेदारी सम्भाली हुई है। जब कि हमारी सरकार डब्लूटीओ की शर्तों पर चल रही है।

आज देश की सरकार भूमि अधिग्रहण विधेयक में संशोधन करने का विचार कर रही है। जिसका प्रारूप वर्ष 2007 में तैयार भी हो चुका है। लेकिन उसकी सोच में सुधार इतना रक्त बहने के बाद भी नहीं हुआ लगता है। क्योंकि पुराने उक्त कानून में जनहित के जिन बिन्दुओं पर गाँव तथा शहरों का विकास, प्राकृतिक आपदा ग्रस्त क्षेत्रों में रहने वाले भूमिहीनों के लिए जमीन की व्यवस्था विकास परियोजना से प्रभावित लोगों के लिए पुनर्वास आदि की चर्चा थी। उन्हें बदल कर जनहित के मुद्दों और आधारभूत संरचना के विकास की परिधि में खड़ा कर देने का दूषित प्रयास हो रहा है। इसके अतिरिक्त कार्पोरेट सेक्टर को जमीन लेने के मामले में बिल्कुल मुक्त करने का भी खतरनाक यत्न है। उपरोक्त संशोधित विधेयक में।

आज पुराने भूमि अधिग्रहण कानून में व्यापक परिवर्तन की गुन्जाइश है। पूर्व में किसानों के अधिकारों तथा उनके हितों से अधिक राज्य तथा ताकतवर समूहों की रक्षा के लिए भूमि अधिग्रहण कानून बनाया गया था।

पहले तो इसके नाम से ही तानाशाही झलकती है। इसका नाम भूमि अधिग्रहण तथा पुनर्वास अधिनियम या इस जैसा ही होना चाहिए। जिसमें भूमि अधिग्रहण से अधिक पुनर्वास पर बल देना चाहिए। पुनर्वास का अर्थ पहले से अधिक आमदनी तथा बेहतर जीवन होना चाहिए। प्रथम तो कृषक को भूमि के बदले भूमि देने का प्रावधान होना चाहिए। भूमि अधिग्रहण में वास्तविक मांग पर विशेष ध्यान रखना चाहिए, उसे प्रोजेक्ट में कितनी भूमि की आवश्यकता है उसके अनुसार अधिग्रहण की व्यवस्था होनी चाहिए। उक्त अधिनियम 1894 के खण्ड 7 के अनुसार कम्पनियों के लिए भूमि अधिग्रहण प्रावधान समाप्त होने चाहिए। उसके अनुसार कम्पनियों भूमि अधिग्रहण के अधिकार मिले हुए हैं। अधिग्रहण से पहले उसके स्वामी को सूचित कर उसका पक्ष सुनने तथा आपत्तियों का मौका देना चाहिए। भूमि को बाजारू कीमत के आधार पर अधिग्रहित करना चाहिए, तथा वर्तमान बाजार की अधिकतम कीमत उसे मिलनी चाहिए। भूमि अधिग्रहण की एक पारदर्शी तथा समयबद्ध योजना बनाई जाय। जिसमें उसकी भूमि की कीमत जल्द से जल्द तथा एक ही भाग में दी जाय जिससे वे उक्त धन का उपयोग बेहतर तरीके से कहीं अन्यत्र कर सकें। भूमि अधिग्रहण मुआवजा वाद

...2

तथा शिकायतों की सुनवाई एक अलग स्वतंत्र डिवीजन के माध्यम से की जाय। जिसमें उसके निर्णय की समय सीमा निर्धारित हो तथा उसे लम्बे मंहगे तथा अन्तहीन मुकदमेबाजी के मार्ग से न गुजरना पड़े। एवं उसकी शिकायतों का तेजी से निपटारा हो सके। जिसके लिए भूमि अधिग्रहित की जाय उसका उपयोग सिर्फ उसी योजना में किया जाय। किसी अन्य में नहीं। यदि कोई अधिग्रहित भूमि एक निश्चित अवधि तक उपयोग में न लाई गई हो तो उसे पुनः उसके पूर्व स्वामी को या उसके वारिसों को वापस लौटा दी जाय।

भूमि अधिग्रहण से पहले सरकार को किसानों के मानवीय पहलुओं पर विचार कर देखना चाहिए कि किसान का अपनी जमीन से क्या रिश्ता होता है। वह भूमि उसके लिए कर्मभूमि होती है। जो उसका सम्मान तथा मर्यादा भी होती है। वह उसे किसी भी कीमत पर बेच नहीं सकता, उससे उसका सम्मान तथा मर्यादा छीनने का हक भी किसी को नहीं है। यदि उसकी मर्यादा से छेड़–छाड़ होगी तो संघर्ष भी होगा। जिस देश की 70 प्रतिशत आबादी कृषि आधारित है वहाँ उसकी बिना इच्छा के जबरन उससे जमीन छीनना एक दुर्भाग्य तथा यह दर्शाती हैं कि राज्यीय तथा केन्दीय सरकारें किसानों के प्रति कितनी संजीदा हैं।

यदि प्रस्तावित जमुना एक्सप्रेस वे या गंगा एक्सप्रेस वे बनता है तो निश्चित ही कांस्ट्रक्शन कम्पनी के वारे–न्यारे होंगे। इलाके का विकास भी होगा तथा राज्यों की कमाई भी बढ़ेगी। अकेले उत्तर प्रदेश में 14 लाख लोग बेघर होंगे। सिर्फ उसे मिलेगा मुट्ठीभर पैसा जिसका एक भाग उसे उक्त अपनी जमीन के मुवाजे को उठाने के चक्कर में चढ़ावे की भेंट चढ़ जायेगा। जिसके लिए उसे करना होगा एक लम्बा इन्तजार। सिर्फ उत्तर प्रदेश में लगभग डेढ़ लाख हेक्टेअर उपजाऊ जमीन जमुना एक्सप्रेस वे तथा गंगा एक्सप्रेस वे के नाम पर ली जा रही है। वह भी निजी कम्पनियों द्वारा जो 35–40 वर्षों तक टोल टैक्स की वसूली करेंगी। मतलब इतने वर्षों तक दीर्घ कालीन मुआवजे की पक्की गारंटी। यदि हम विचार करें, गंगा एक्सप्रेस वे और जमुना एक्सप्रेस वे में जिस जमीन को अधिग्रहित कर सरकार सड़क बनाना चाहती है उस कृषि भूमि पर होनेवाली खेती कहीं अन्यत्र नहीं हो सकती। सरकार को ऐसी सीमित भूमि को अधिग्रहित करने के पूर्व सौ बार विचार करना चाहिए।

देश का किसान अपनी कृषि भूमि को बचाने के लिए सड़कों पर है। खूनी संघर्ष हो रहे हैं, क्या यह अधिग्रहण है या लूट ?गाजियाबाद की ट्रॉनिका सिटी में लगभग 200 रुपये प्रति वर्ग मीटर की दर से किसानों से ली गई जमीन लगभग 20 हजार रुपये प्रतिवर्ग मीटर की दर से बेची गई। यह क्या है ?क्या सरकारी व्यवस्था की आड़ में डकैती नहीं लगती ?1950 के दशक में पश्चिमी बंगाल सरकार ने हुगली जिले में जीटी रोड व मेन ईस्टर्न लाइन के मध्य 750 एकड़ जमीन बिड़ला ग्रुप को अधिग्रहित की थी परन्तु आज तक मात्र 300 एकड़ ही प्रयोग की गई। शेष 450 एकड़ भूमि अभी भी बेकार पड़ी है। क्या उपरोक्त अधिग्रहण उचित था ? आज तामिलनाडु सरकार 50 लाख एकड़ सरकारी जमीन बहुराष्ट्रीय व निजी कम्पनियों को सौंप चुकी है। किसानों की जमीन हड़पने की तैयारियाँ राज्य तथा केन्द्रीय सरकारों के स्तर पर कीं जा रही हैं। माडल सिटी के नाम पर जेपी समूह 5 गाँवों के किसानों की जमीन का मात्र 446 रुपये प्रतिवर्ग मीटर की दर से मुआवजा दे रहे हैं तथा उसे 5,500 रुपये की दर से बेचा जा रहा है। इसी प्रकार 880 रुपये प्रतिवर्ग मीटर की दर से लेकर 6,200 रुपये वर्ग मीटर की दर से बेचने का प्रयास हो रहा है।

18वीं शताब्दी के आस–पास इंग्लैण्ड में औद्योगिक क्रांति हुई। फिरंगियों ने भारत में 1894 में पहला भूमि अधिग्रहण कानून बनाया। विडम्बना देखिये वही कानून हमारे देश में 100 वर्षों तक बिना किसी बड़े परिवर्तन के शासन करता रहा। उपरोक्त वर्षों में जनसंख्या में

...3

बेतहासा वृद्धि के कारण वर्तमान उपरोक्त कानून बिल्कुल ही गैर मानवीय हैं। वैसे भी अंग्रेजों ने उपरोक्त कानून जनपक्षीय न बनाकर स्वयं तथा औद्योगिक घरानों के हित में तैयार किये थे। केन्द्र की कांग्रेस सरकान ने अपनी प्रथम पारी के वर्ष 2007 में सोनिया गाँधी की अध्यक्षता में नया संशोधित विधेयक तैयार किया था। लेकिन उत्तर प्रदेश में लगातार खूनी संघर्ष हो रहा है। निश्चित ही परोक्ष रूप से खूनी संघर्ष के विषय में उनकी भी जिम्मेदारी बनती है। बिडम्बना देखिये केन्द्र की सरकार जिस भूमि अधिग्रहण विधेयक को वर्षों से लटकाये है उसी के नुमाइन्दे तथा युवराज राहुल गाँधी नोएडा जाकर अपनी राजनैतिक रोटियाँ सेंक उत्तर प्रदेश 2012 विधान सभा चुनाव की जमीन तलाश रहे हैं। उत्तर प्रदेश से पूर्व पश्चिमी बंगाल, उड़ीसा, आन्ध्र प्रदेश सहित अन्य प्रदेशों में अधिग्रहण के विरोध में हिंसक प्रदर्शन किये। लेकिन केन्द्र की सरकार के कान पर जूँ तक नहीं रेंगना सिर्फ इस बात की तरफ इंगित करता है कि भारत का 'कृषि प्रधान स्वरूप' सरकारी एजेंडे में किस पायदान पर है।

भूमि अधिग्रहण कानून जिसके अनुसार आज जनहित के नाम पर सरकार जब चाहे जिसकी चाहे जबरन जमीन ले सकती है। जन हित के मानक क्या हैं ?उसके पैमाने क्या हैं? क्या लाखों परिवारों को बेघर कर सिर्फ सर्किल रेट पर जमीन की कीमत जबरदस्ती दे देना जनहित की श्रेणी में आता है, विचारणीय है ?गाँव की कृषि भूमि का सर्किल रेट वर्तमान बाजारू मूल्य से कई गुना कम होता है जो जनहित के नाम पर जबरन छीन ली जाती है। केन्द्र की अटल बिहारी वाजपेयी के नेतृत्व वाली सरकार ने वर्ष 2002 में उस पुराने अधिग्रहण कानून को परिवर्तित कर दिया था जिसके माध्यम से कोई भी विदेशी कम्पनी भारत में खेती की जमीन खरीद कर अथवा ठेके पर ले, खेती कर सकती है। लेकिन आज केन्द्र में सोनिया गाँधी के नेतृत्व वाली सरकार जो संशोधिक विधेयक ला रही है। उसमें बहुत सी सिफारशें अनुचित प्रतीत होती हैं जैसे कोई संगठन, ढाँचा, कम्पनी सार्वजनिक उद्देश्य के तहत कोई परियोजना प्रारम्भ करना चाहती है तो उसे मात्र 70 प्रतिशत भूमि क्रय करनी होगी। शेष 30 प्रतिशत की व्यवस्था अधिग्रहण के माध्यम से राज्य सरकार करेगी। उक्त में आकस्मिक अधिग्रहण के मुआवजों को विशेष प्रावधान में रखा गया है। परन्तु आकस्मिक अनिवार्यता को परिभाषित नहीं किया गया है। कुल मिलाकर नया भूमि अधिग्रहण संशोधित विधेयक वर्ष 2007 भी जन सामान्य या किसानों के हित में न जाकर पुनः 1894 के अंग्रेजों के बने भूमि अधिग्रहण कानून की तरह ही प्रतीत हो रहा है।

आज उत्तर प्रदेश में ही नहीं देश के अन्य भागों में भी किसानों की जमीन की अंधाधुन्ध लूट हो रही है, जैसे सरकारें यह मान बैठी हैं कि कमी पड़ने पर भूमि भी अन्य उत्पादनों की तरह फैक्ट्री में तैयार कर ली जायेगी। कुछ प्रबुद्ध जनों की राय के अनुसार कृषि भूमि का बेहतर उपयोग विकास के लिए होना चाहिए। ऐसा लगता है जैसे वह आवश्यकता पड़ने पर 'मालों' या लम्बी–लम्बी सड़कों पर खेती करने लगेंगे। आज कृषि भूमि का जबरन सरकारी ओट में छीना जाना सिर्फ कृषक का ही विषय नहीं रहा। बल्कि सम्पूर्ण मानव समाज का विषय हो गया है। यदि ऐसा चलता रहा तो निश्चित ही मानव सभ्यता खतरे में पड़ जायेगी। बचेंगी सिर्फ कंक्रीट की सड़कें तथा उसके घने जंगल।

समाप्त

लेखक – **(राघवेन्द्र सिंह),**
17 / के / 145, अम्बेदकर नगर,
गीतानगर, कानपुर – 208 025 (उ0 प्र0) भारत
ई मेल : raghvendrasingh36@yahoo.com
मोबाइल : (0091) 09450944740